नारीवाद के युग में दलित नारी

परिदृश्य

मंजूर अली

एक ऐसा राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक आंदोलन, जिसका मकसद नारी के लिए समान अधिकार एवं कानूनी संरक्षण हो, उसे नारीवाद कहते हैं। नारीवाद का सिद्धांत पुरुष और महिला को सार्वजनिक एवं निजी जीवन में समान मानता है। दोनों को एक ही तराजू पर तोलता है। यह पहली बार 19वीं सदी में स्वरूप में आया और 1960 तक इसने एक आंदोलन का रूप ले लिया।

भारतीय नारीवाद का रूप समकालीन पश्चिमी नारीवाद से थोड़ा अलग रहा है। दूसरे मायनों में थोडा निर्भर और कमजोर। जिस देश में नारी को पहले से ही 'देवी' का स्थान हो, वहां शोषण के रूप को समझना थोड़ा मुश्किल होता है। संस्कृति और सभ्यता के नाम पर महिलाओं को कई बंधनों में बांध दिया जाता है। बेशक भारतीय नारीवाद धीमी लेकिन स्थिर गति से बराबरी के हक की लड़ाई लड़ता रहा है, लेकिन इस आंदोलन ने कभी भी पितृसत्ता की बुनियाद पर हमला नहीं किया, जिस वजह से अधिकारों में थोड़ी रियायत मिल तो जाती है, पर आंदोलन पूरी तरह कामयाब नहीं होता। दूसरी बात यह है कि जब हम नारी आंदोलनों की बात करते हैं, तो हम सजातीय व्याख्या करने की भूल करते हैं। भारतीय समाज की संरचना मूल रूप से जातिगत पदानुक्रम है, जिसके सबसे निचले पायदान पर दलित है। इस तबके की महिलाओं की समस्या उच्च जाति की महिलाओं से भिन्न है।

दलित महिलाओं को जातीय वर्ग और लिंग के तीन बोझ का सामना करना पड़ता है। वर्तमान हालात में दलित महिलाएं हर लिहाज से पिछड़ी हुई हैं। राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और जनजाति आयोग की रिपोर्ट देखें, तो 60-75 फीसदी दलित लड़कियां प्राथमिक शिक्षा के बाद पढ़ाई छोड़ देती हैं, वहीं 85 फीसदी दलित भूमिहीन हैं। भूमिहीन होने

> वर्तमान दौर में अहम सवाल यह है कि क्या दलित आंदोलन भूमि सुधार के मुद्दों को अपने संघर्ष में शामिल करेंगे और क्या भारतीय नारीवाद सजातीय रहेगा?

की वजह से दलित महिलाओं को दूसरे के खेतों में मजदूरी करनी पड़ती है। मजदूरी में उन्हें वेतन तो कम मिलता ही है, यौन उत्पीड़न की शिकार भी वे होती हैं। ह्यूमन राइट वाच मानता है कि हजारों लड़कियों को देवदासी बनने के लिए बेचा जाता है। गृह मंत्रालय की ही रिपोर्ट देखें, तो 2005-09 के दरम्यान दलित महिलाओं के साथ 6,541 बलात्कार की घटनाएं हुई हैं, जबकि इसी वर्ष के दौरान 3,134 अनुसूचित जनजाति की महिलाएं बलात्कार की शिकार हुई हैं।

दलित महिलाओं की इस स्थिति के कई कारण हैं, जिनमे ब्राह्मणवाद प्रमुख है। बाबा साहब आंबेडकर भी इसके कारणों में मनुस्मृति को गिनाते थे और महिलाओं को दमनकारी, जाति आधारित और कठोर पदानुक्रमित सामाजिक व्यवस्था का शिकार मानते थे। इस स्थिति से निपटने के लिए बाबा साहब ने ब्राह्मणवाद को खत्म करना ही उचित समझा, लिहाजा मनुस्मृति को 25 दिसंबर, 1927 को सत्याग्रह के दौरान जलाकर उन्होंने प्रतीकात्मक संदेश देने की कोशिश की। आंबेडकर ने इस तथ्य को बखूबी समझा और उसकी पुरजोर मुखालफत भी की। उनके सफल प्रयास से खोटी नामक भूमि कार्यकाल प्रणाली का अंत हुआ और कई गरीब ग्रामीण भयानक आर्थिक शोषण से आजाद हुए। डॉक्टर आंबेडकर भूमि सुधार के पुरजोर समर्थक थे और मानते थे कि भूमि का राष्ट्रीयकरण होना चाहिए। मगर आजादी के 64 वर्षों के बाद भी हम पाते हैं कि भूमि सुधार के कार्यक्रम विफल रहे हैं। और जब तक यह नहीं होता है, तब तक ब्राह्मणवाद की जड़े बनी रहेंगी। बाबा साहब का भूमि सुधार का सपना आज भी अधूरा है, इसलिए तमाम ऐसे आयोगों ने, जो गरीब तबकों के लिए बने, भूमि सुधार की वकालत की। बहरहाल यहां अहम सवाल यह है कि क्या दलित आंदोलन भूमि सुधार के मुद्दों को अपने संघर्ष में शामिल करेंगे। क्या भारतीय नारीवाद सजातीय रहेगा? इनका जवाब संजीदगी से ढूंढना होगा।

एसएमएस करें

कॉम्पैक्ट के बारे में अपनी प्रतिक्रिया हमें एसएमएस करें। अपने शहर का नाम जरूर लिखें।

हमारा नंबर है :

09999733355